ISSN : 2583-2948

व्यंग्य

वो इधर का लगता रहे और उधर का हो जाए !

संतोष त्रिवेदी

जे 3/78 ए, पहली मंज़िल

खिड़की एक्स. मालवीय नगर

नई दिल्ली-110017

9818010808

बड़े दिनों बाद कल शाम को लल्लन चचा मिल गए। बौराए घूम रहे थे। हम पहचान ही नहीं पाए। हमको आशंका हुई कि कहीं इन पर तीसरी लहर का असर तो नहीं आ गया,पर जल्द ही अपनी भूल का अहसास हुआ।उनके माथे पर 'फुल-वैक्सिनेटेड' का लेबल चस्पा था।चेहरे पर किसी तरह का ख़ौफ़ भी नहीं था।हमें देखते ही 'आँय-बाँय' बकने लगे। उनके ऐन साथ चल रही उनकी आत्मा ने रहस्य उजागर किया कि उनके अंदर सियासत का साया प्रवेश कर गया है। इसलिए वे भी 'सही जगह' में घुसना चाहते हैं। यह जानकर मुझे लल्लन चचा को नज़दीक से जानने की ललक हुई। वे बड़बड़ा रहे थे,'देश इस समय भीषण बदलाव के दौर में है। पलक झपकते सब बदल रहा है। जो देख रहे हो,वो सच नहीं है। धाराएँ बदल रही हैं। दल बदल रहे हैं।लोग गंडक में डुबकी लगाकर गंगा का पुण्य लूट रहे हैं। और तो और ,निष्ठा और नैतिकता व्यक्तित्व की सबसे बड़ी बुराइयाँ हैं।जबकि झूठ और पाखंड अच्छे 'कैरियर' साबित हो रहे हैं। हम कुछ दिनों से अपनी आत्मा को कुरेद रहे थे। इसी ने बाहर आकर समझाया कि प्रगतिशील होने के लिए विचारधारा कोई 'बैरियर' नहीं है। उसे तोड़कर ही मुक्ति का द्वार खुलता है। इसलिए वाम हो कि दक्षिण, 'मध्य' में आना ही सबकी नियति है। '

यह कहकर उन्होंने नया झंडा उठा लिया।वाममार्ग से होते हुए वे मध्य की ओर बढ़ चले। आगे का रास्ता बेहद चौड़ा था। जगह भी ख़ूब ख़ाली पड़ी थी। इसलिए उस पर चलने और आगे बढ़ने का उतना ही 'स्कोप' दिख रहा था। हमें भी कुछ सवाल दिखाई दिए। उन्हीं से शुरू कर दिया, 'कल तो झंडे का रंग गाढ़ा था।आज बिलकुल हल्का है। रंग बदलते समय कुछ 'विचार-उचार' नहीं किये चचा ?'

वे चेहरे से 'मास्क' हटाते हुए बोले, 'क्यों नहीं ! ख़ूब किए।अभी तक यही तो किए हैं। अफ़सोस है कि बुढ़ापे में यह बात समझ आई कि मनुष्य को 'विचार' में नहीं 'धारा' में बहना चाहिए। बाएँ,दाएँ रहेंगे तो किनारे हो जाएँगे। इसलिए विचार को उचार कर मध्य में आ गए हैं। सत्ता की नाव यहीं बहती है। अब बहने में भी सुभीता होगी।जब मन किया,बाएँ या दाएँ करवट ले ली।पलटने में तनिक संकोच किया तो ज़िंदगी भर पछताएँगे।वैसे भी आदमी समझदार तभी माना जाता है,जब उसके लिए कोई अपना-पराया नहीं होता। मक़बूल शायर ने कहा भी है, 'उसी को जीने का हक़ है जो इस ज़माने में,इधर का दिखता रहे और उधर का हो जाए।'

राजनैतिक-वनवास में रहकर हमने इस पर ख़ूब चिंतन किया है। तुमको भी 'फ़्री' में बाँट रहा हूँ। वर्तमान में वाम दक्षिण की ओर खिसक गए हैं तो दक्षिण मध्य बनने को मचल रहा है। बचा मध्य तो उसके लिए कोई निषेध नहीं रहा। वह वास्तव में बचा ही नहीं। उसकी हर जगह पैठ है। सभी 'धाराएँ' एकाकार हो गई हैं। इससे पहले कभी ऐसा राजनैतिक-संगम देखने को नहीं मिला।'

वे बोले जा रहे थे,आत्मा हँस रही थी।कहने लगी, 'सब तुम्हें ही नहीं पता।कुछ मेरे भी अनुभव हैं पर ये बातें 'ऑफ़-रिकार्ड' रहनी चाहिए। आजकल आत्माएँ बोलती नहीं बयान देती हैं। फ़िलवक्त मैं बयानबाज़ी की होड़ में नहीं पड़ना चाहती। मैंने दलों में इत्ती पारदर्शिता कभी नहीं देखी। सब बेपर्द हो चुके हैं। कल जो लोकतंत्र के माथे का कलंक था,आज वही 'टीका' है। पार्टी-दफ़्तर अब शुद्धिकरण-केंद्र बन गए हैं। 'बहना' अब प्रगतिशीलता की निशानी बन गया है। शुचिता और लंपटता गले मिल रही हैं।यह नया समय है। पाखंड छोड़कर लोग यथार्थवादी बन चुके हैं। सिद्धांतों और निष्ठा की गठरी कब तक सिर पर लादे रहते। इसलिए आदरणीय चचा जी सब फेंक कर हल्के हो गए हैं। इन्हें हल्के होने की क़तई चिंता नहीं हैं। सामने कुर्सी दिखती है तो 'विज़न' और 'वज़न' दोनों 'चेंज' हो जाता है। इनका भी हो गया है और हाँ,सवाल केवल चचा पर ही क्यों ? बदलने के दौर में केवल नेता ही नहीं बदल रहे हैं।जनता भी रोज़ बदल रही है। अब किसी के पास 'जनता' ही नहीं बची।वह दलित,पिछड़ी,अल्पसंख्यक और सवर्ण के खाँचे में बदल चुकी है। नए युग के नेता जनता के नहीं इन्हीं के प्रतिनिधि हैं।जिसके पास 'एक' जनता है,सत्ता उससे कोसों दूर रहती है। इसलिए फ़ोकस इस बात पर ज़्यादा है कि किसके पास 'कितनी मात्रा' में जनता है। लोकतंत्र की जान अब 'जाति-सम्मेलनों' में है। यही बात चचा जी को मालूम पड़ गई है।'

आत्मा के इस विस्फोट से हल्ला मच गया ।आस-पास भारी भीड़ जमा हो गई ।लोग आत्मा की जाति पूछने लगे ।चचा अचानक 'मध्य' से छलाँग मारकर दक्षिण-दिशा की ओर भागे।शायद उन्होंने वह कविता नहीं पढ़ी थी कि 'दक्षिण की दिशा मौत की दिशा होती है !'

कोई हमारी जाति पूछता,इससे पहले हम भी वहाँ से सरक लिए।आत्मा का क्या हुआ,अब तक कोई ख़बर नहीं।